

## होली पूजा

२८ फेब्रुवारी १९९१, दिल्ली

# आ

प तो इतिहास जानते हैं और पौराणिक बात भी जानते हैं कि होलिका को जलाने पर ही होली जलाई जाने लगी और इसमें किसानों के लिए भी उनका सब काम-वाम खत्म हो गया और ये सोच करके कि अब सब कुछ जो बोया था उसका फल मिल गया था। उसको बेच-बाच कर आराम से बैठे हैं, तो थोड़ासा उसका आनन्द भोगना चाहिए, पर इससे भी पहली बात ये है कि होली की शुरुआत जो थी हालांकि ये होलिका का दहन जो हुआ उसी मुहूर्त में बिठायी हुई बात है।

ये काम श्रीकृष्ण ने किया क्योंकि श्रीराम जब संसार में आये तो श्रीराम ने मर्यादायें बाँधी। अपने, स्वयं अपने जीवन से, अपने तौरतरीकों से, अपने आदर्शों से, अपने व्यवहार से कि मनुष्य जो है मर्यादा पुरुषोत्तम की ओर देखे। ये मर्यादा पुरुषोत्तम जो है ये एक चरित्र, ये एक महान आदर्श हम लोगों के सामने रखा गया कि जो राज्यकर्ता है, जो राजा हैं वो हितकारी होने चाहिए, जिसे सॉक्रेटिस ने 'बिनोवलेंट किंग' कहा है। वो आदर्श स्वरूप श्रीराम हमारे इस संसार में हैं और इतना बड़ा आदर्श उन्होंने सबके सामने रखा कि लोगों के हित के लिए, जनमत के लिए उन्होंने अपनी पत्नी तक का त्याग कर दिया, हालांकि उनकी पत्नी साक्षात महालक्ष्मी थीं। वो जानते थे कि उन्हें कुछ नहीं हो सकता। तो भी लोकाचार में, दुनिया के सामने उन्होंने अपने पत्नी को त्याग दिया कि जिससे लोकमत हमारे प्रति विशुद्ध न हो और लोकमत का मान रखें। लेकिन वर्तमान काल में हम देखते हैं कि हमारे यहाँ लोकमत का जरा भी विचार नहीं किया जाता। लोग बिलकुल निर्लज्जता से राज्य करते हैं और उसके प्रति ध्यान नहीं देते। उसकी वजह ये है कि लोग मर्यादा पुरुषोत्तम के बारे में जानते ही नहीं या जानते हैं तो उसे समझते नहीं और समझते हैं तो भी उसे अपनाते नहीं। ये कितनी आवश्यक बात है कि जो राज्य करते हैं वो अपनी मर्यादाओं में रहें। अपने को मर्यादाओं से बाँधे। और तभी सारा संसार जो है उन मर्यादाओं में बाँधा जाएगा। लेकिन राज्यकर्ता ही अगर किसी मर्यादा के बगैर, किसी आदर्शों के बगैर या किसी विशेष तरह की प्रणाली के बगैर चलें तो घातक होगा ही और सबसे ज्यादा जो राजकीय और विश्वबंधुत्व है वो सारा ही नष्ट हो जाएगा।

आज मनुष्य जो हैं अपने देश में भी बहुत संकीर्ण होता जा रहा है क्योंकि हमने अपनी मर्यादायें जो बाँधनी थी वो नहीं बाँधी और जो नहीं बाँधनी थी वो बाँधी। जैसे हमने अपने को, मैंने आपसे पहले बताया दिल्ली वाले समझते हैं, हम बम्बई वाले समझते हैं फिर बम्बई वाले दिल्ली में हम लोग कोई है तो बम्बई शहर वाले हो गये फिर वो कोई दिल्ली वाले हो गये, कोई नोएडा वाले हो गये। फिर करते-करते इस तरह की हम अपनी सीमायें बाँधते जा रहे हैं। जब हम विश्वबंधुत्व में उतरें, जब हम विश्व के एक नागरिक हो गये हैं तब भी हम इस तरह की छोटी छोटी मर्यादाओं में बँधे हुये हैं और जो मर्यादायें हमें अपने व्यक्तित्व में, अपने पर्सनेलिटी में बाँधनी चाहिए वो हमने नहीं बाँधी। जो श्रीराम ने बाँधी थी क्योंकि आप जानते हैं कि श्रीराम विश्व के लिए आदर्श राजा के रूप में आये थे। लेकिन उनका अपना स्वयं का जीवन एक आदर्श और मर्यादाओं से बाँधा हुआ था। तो जिन मर्यादाओं को हमने बाँध रखा है उससे तो हम क्षुद्र हो जाएंगे, छोटे हो जाएंगे, संकीर्ण हो जाएंगे और जो मर्यादायें श्रीराम ने अपने चारों तरफ बाँधी हुई थी उससे हम सबल हो जाएंगे। जैसे कि समझ लीजिए कि ऐरोप्लेन है। उसके अन्दर के सारे स्कू वगैरा है वो अगर ठीक से ना बाँधे जाएं और वो अगर ठीक से ना जोड़े जाएं या वो कार्यान्वित ना हो और जब ये ऐरोप्लेन उड़ेगा तो सब ये अव्यवस्थित हो जाएगा। उसकी जितनी भी शक्ति है वो नष्ट हो जाएगी।

जो मर्यादायें हमारी शक्ति को नष्ट करती हैं वो तो हम बहुत आसानी से बाँध लेते हैं किंतु जो मर्यादायें हमारी शक्ति को बढ़ाती है, हमारा हित करती है इतना ही नहीं हमें एक प्रभुत्व देती है, व्यक्तित्व देती है, एक बड़प्पन देती है उसको हम नहीं

बाँधते। यही एक बड़ा भारी दोष हमारी सूझबूझ का और विचार का है।

लेकिन तो भी इन मर्यादाओं के बीच में बँधे हुए लोगों ने उल्टी तरफ से जब चलना शुरू कर दिया और मर्यादाओं का मतलब कर्मकाण्ड में घुस जाना और एक-दूसरे से अलग हट जाना या जैसे श्रीरामचन्द्रजी ने पत्नी का त्याग कर दिया वैसे हम भी अपनी पत्नी का त्याग करेंगे। पत्नी ने भी बाद में उनका त्याग कर दिया था लेकिन अपने ढंग से, अपनी अस्तित्व की लाज रखते हुए अपने ढंग से श्रीरामचन्द्रजी का त्याग कर दिया था। तो जब हम अपने को इस तरह से संकीर्ण बनाते जा रहे हैं और बनते जा रहे हैं तब हमको चाहिए कि हम अपनी ओर थोड़ा विचार करें कि हमने कौन सी मर्यादायें बाँध रखी हैं और कौनसी मर्यादाओं में हम बँधते चले जा रहे हैं और कौन सी मर्यादायें हमने बाँधनी चाहिए थी, बाँधी ही नहीं। उसकी वजह से हमारा सारा सामाजिक जीवन, राजकीय जीवन और विश्वबंधुत्व की भावनायें सब एकदम अस्त-व्यस्त हो गईं। ढीली पड़ गईं। लेकिन जो मर्यादायें श्री रामचन्द्रजी बाँधे थे, उससे इसी तरह की मर्यादायें लोग बाँधने लगे जिसे मैंने बताया और इसी तरह से कर्मकाण्डों में आदमी जाने लगे और धर्म माने ऐसी कोई बड़ी भारी ऐसी कोई न कोई चीज़ माने जिसमें आप हँस भी नहीं सकते, बोल भी नहीं सकते। 'आप उपवास करिये' इस तरह के उस वक्त के ब्राह्मणाचार थे और पंडितों ने इस तरह की गलत चीज़ें सिखा दी कि यही धर्म है। धर्म का मतलब है आप कर्मकाण्ड करो, इसमें पैसा दो, उसमें पैसा दो और गम्भीरता से रहो, हँसो मत, बोलो मत, किसीसे मिलो मत, एकान्त में रहो। इस तरह की जो धारणाएँ लोगों ने बना दी उसको तोड़ने के लिए श्रीकृष्ण ने जन्म लिया और श्रीराम स्वयं, साक्षात् श्रीकृष्ण थे उन्होंने जन्म लिया और श्रीकृष्ण बनकर आये तब उन्होंने लीलायें रची और सारे संसार में लीला का प्रचार किया।

दूसरी बात ये कि श्रीराम ने जन की गहराई को किस तरह से छूना चाहिए इसमें भी खेल रचा। श्रीकृष्ण की जो लीला थी वो और तरह की थी और श्रीराम का जनता की ओर जो ध्यान था वो और था। क्योंकि आप जानते हैं, विशुद्धि चक्र पर जन हो जाता है। और नाभी चक्र पर आपने देखा कि धारणा हो जाती है। विशुद्धि चक्र पर आप जन पर आ जाते हैं माने कलेक्टिविटी पर आ जाते हैं। सामूहिकता पे आ जाते हैं। जब आप कलेक्टिविटी में आ गये तो कलेक्टिविटी में भी किस तरह से श्रीकृष्ण ने लीला से ही लोगों को जाग्रत करने का प्रयत्न किया। जब वे छोटे थे, पाँच साल की उम्र के थे तो उन्होंने औरतें जो नहा रही थी, उनके कपड़े छिपा लिये। चार-पाँच साल की उम्र में बच्चों को क्या समझता है। आजकल के बच्चें जरा ज्यादा ही होशियार हैं। उस ज़माने में तो बीस साल के लड़कों को भी अकल नहीं होती थी। आजकल सब चीज़ बहुत ज्यादा लोग समझने लग गये हैं। तो उस जमाने के बच्चों ने कैसा जीवन बिताया। उस दृष्टि से देखा जाए तो श्रीकृष्ण तो बिलकुल ही आजकल के एक महीने के बच्चे के बराबर होंगे। क्योंकि आजकल के बच्चें तो इतने जल्दी बढ़ जाते हैं कि कुछ समझ नहीं आता। उनको दुनियाभर की बातें मालूम हैं। तो इस तरह से एक बड़ी अबोधिता में उन्होंने औरतों के कपड़े छिपाये, और ये लोग जमनाजी में नहाती थीं। जमनाजी में सीताजी के बाद महालक्ष्मी, महालक्ष्मी से ही उत्थान होता है। **महालक्ष्मी तत्त्व से ही आप लोग सहजयोग में जो कुछ प्राप्त कर पायें हो, वो प्राप्त किया।** तो उनकी पीठ पर, उपर बैठ कर के वो देखते थे कि किस तरह से इनकी जागृति करें। दृष्टि इनकी पीठ पर रहती थी। उसके बाद जब औरतें घड़ा लेकर चलती थीं, उनके घड़े पीछे से तोड़ते थे कि वो जो जल, जो कि जमनाजी का जल है, जो कि वायब्रेट हो गया, उनको फोड़ने से वो जल उनके पीठ पर गिर जाए तो इससे इनकी भी जागृति हो जाएगी। इनका खेल देखिये।

उसके बाद रास, 'रा' माने शक्ति और 'स' माने सहिता जैसे सहज है, तो रास खेलते थे हात पकड़के तो सब लोग थक जाते थे। श्री राधाजी कहती थी, 'मैं तो थक गयी।' रा...धा.. फिर वही शक्ति की धारणा करने वाली। 'अच्छा, अच्छा कोई बात नहीं मैं तुम्हारे पैर दबा दूँगा, पर तुम अभी नाचो।' सबको नचाते थे। सब रास खेलते थे। रास में सब लोग नाचते थे। रास में नाचकर वो राधाजी की शक्ति सबमें संचालित करते थे। मुरली बजाते थे। **मुरली भी एक तरह से कुण्डलिनी ही है क्योंकि उसमें भी छिद्र वैसे ही होते हैं जैसे कुण्डलिनी में चक्र होते हैं** और उस नृत्य के दौरान वो राधाजी की जो शक्ति थी सबके हाथों में से बहाते थे। इस प्रकार उन्होंने लीला रचायी पर बाद में होली के लिए भी उन्होंने एक बड़ा सुन्दर तरीका ढूँढ निकाला कि पानी में रंग मिलायें।

आज के जैसे गंदे रंग पहले नहीं होते थे। आप तो जानते हैं कि फूलों के बड़े सुगन्धित रंग पहले बनाये जाते थे। और उसे संजो करके, बहुत पवित्र चीज़ समझ के बनाया जाता था। हर त्यौहार उस जमाने में जो भी मनाया जाता था, हमारे

जमाने में भी तो वो बहुत पवित्र चीज़ समझी जाती थी। अब तो अपवित्र चीज़ ही अच्छी मानी जाती है। ऐसा कुछ नज़र आता है जैसे कि कीचड़ है, ये है, वो है लोग फेंकते हैं ये तो अनादर है। इस तरह के बना करके और वो चेतित पानी जो था, वायब्रेटेड पानी, वो सबके बदन पर फेंकते थे जिससे उनके अंग-प्रत्यंग चेतित हो जाए। ये उनका विचार था। ये उनका खेल था। ये नहीं कि आप लोगों पे ऐसी-ऐसी चीज़ें फेंके। मैंने तो सुना कि एक साहब के प्राण चले गये। उनपर कुछ गुब्बारा मारा गया था। ये कितनी शर्म की बात है।

जो चीज़ सुन्दर से सुन्दर भी किसी भी अवतरण में बनायी गयी उसका किस तरह से विपर्यास करना चाहिए, उसको किस तरह से कबाड़ा करना चाहिए, उसको किस तरह से बिलकुल ही निम्न स्तर की चीज़ बनानी चाहिए ये सिर्फ इन्सान से ही हो सकता है। जानवर भी नहीं कर सकते। इन्सान तो एक खास चीज़ है। पता नहीं उनको क्या हो जाता है। रंग खेलते-खेलते रंग अगर खत्म हो गया तो उन्होंने कीचड़ उठा लिया। कीचड़ खत्म हो गया तो उन्होंने गोबर उठा लिया। गोबर खत्म हो गया तो उन्होंने टार उठा लिया। अब जो उनको जोश चढ़ गया। अरे भाई, किस चीज़ के लिए होली हो रही है? उसका तत्व ही खत्म कर देना और उसकी सारी जो सुन्दरता है कि इससे हमारे आपसी प्रेम को बढ़ावा मिले। जन के बीच में चेतित जल फेंका जाए और उससे भी बढ़कर आपसी मेल हो जाए। जो कुछ भी हमारे अन्दर दुष्ट भावनायें हैं, दूसरों के प्रति वो सब क्षमा हो जाए। सब आपस में एक तरह से बहुत ही ज्यादा स्वच्छंद हो कर के, तन्मय हो कर के एकसाथ होली खेलें। उसमें कोई पाप की भावना नहीं होनी चाहिए। कोई हृदय में खराबी नहीं होनी चाहिए।

इस तरह से ये इतनी सुन्दर चीज़ बनायी थी। लेकिन उसका विपर्यास अभी हम देखते हैं तो बड़ा आश्चर्य होता है। जैसे पुणे में गणपति त्यौहार होता है आजकल, तो वहाँ गन्दे-गन्दे सिनेमा के गाने होते हैं। इस तरह की चीज़ें होती हैं। आप वैसे तो कभी सुनेंगे नहीं। पर वहाँ आप गणपति के सामने खड़े हो और आपको सुनना ही पड़ता है और शराब पी कर के उनके सामने झिंगना। गुजरातियों में रास। आजकल बहुत रास करते हैं नवरात्रि में। तो शराब पी कर सब लोग आते हैं। औरतें-आदमी सब शराब पी कर आते हैं। और बढ़िया-बढ़िया कपड़े पहनना, वो तो ठीक है, लेकिन वो सब किसलिए? और क्या वहाँ शुरू हो जाता है। खास करके लंदन में एक बार उन्होंने मुझे बुलाया था 'वहाँ पे भी है, आप आईये।' मैं देखने गयी। मैंने कहा ठीक है रास-लीला में बुलाया है तो जायेंगे। वहाँ जो देखा तो मैं वहाँ पर खड़ी थी, मैंने कहा कि भाई, यहाँ कैसे? ये तो सारे शराबी लोग। बिलकुल औरतें, लड़कियाँ सब शराब पी कर के और इतनी अश्लील तरीके से आपस में वो लोग व्यवहार कर रहे थे कि मैंने कहा कि देवी तो यहाँ से उठ जाएंगी और भूत ही यहाँ नाच सकते हैं। उसी दिन पेपर में आ गया कि इनके यहाँ जो रास होती है वो ऐसी होती है। इनके यहाँ ऐसा होता है, वैसा होता है। याने जहाँ की पाश्चिमात्य लोग, जिस काम को करने में लज्जित हो जाए। माने वो तो बहुत ही नैतिकता के स्तर पर अपने से बहुत कम। वो भी जहाँ लज्जित हो जाए। ऐसे काम वहाँ हिन्दुस्तानी करते हैं-रास। ये बहुत शर्म की बात है। अब वो रास का तो मजा गया, मुझे तो इतना दुःख हुआ। मैं रातभर सोचती रही कि क्या ये हिन्दुस्तानी यहाँ आ कर के अप्रदर्शन कर रहे हैं और दूसरे दिन वही पेपर में आया कि ये सिर्फ एक अनैतिकता, एक बहाना है कि रास में लोग आयें।

तो जो मर्यादायें नैतिकता की और प्रेम की, आदर की, ये छोड़ करके आप होली खेलेंगे तो उस होली का अर्थ यही होता है कि कोई एक बहाना ढूँढ लिया आपने जिससे कि आपके अन्दर जो छिपी हुई गन्दगियाँ हैं उसे आप निकाल रहे हैं। उसकी शोभा ही खत्म हो गयी। अशोभनीय काम में कभी मजा आ ही नहीं सकता। खास कर सहजयोगियों को तो आना ही नहीं चाहिए। सब कुछ शोभनीय होना चाहिए। रास भी तालबद्ध, स्वरबद्ध होती है। रास याने की ढमाढ़म बजा रहे हैं, एक दूसरे पर गिरा जा रहा है। इसमें तालबद्धता है, स्वरबद्धता है शुद्ध चित्त हो इसलिए रास होती है। क्योंकि नृत्य करते वक्त मनुष्य का ध्यान नृत्य के लय पर और सुर पर होता है। और इसलिए उसका चित्त शुद्ध हो जाता है। पर उस वक्त मैंने तो देखा उनका ध्यान कहीं और ही था। तो ये होली का त्यौहार जो श्रीकृष्ण ने, लीलाधर ने बनाया उसकी विशेषता ही ये थी कि मनुष्य उसे एक लीला समझे। सारा संसार एक लीला है।

सहजयोग में भी आपने देखा होगा कि यहाँ पर वाकई आप लोग लीलामय हो गये। संगीत और हर चीज़ में आप तन्मय हो जाते हैं और आनन्द से उसका भोग उठाते हैं। आपस में इतने प्रेम से और बहुत शुद्ध भाव है। सहजयोग में लोगों में बहुत

शुद्ध भाव है और बहुत नैतिकता से आप सारा कार्य सुन्दरता से करते हैं। इसमें कोई शक नहीं। लेकिन लीलामय होना ही विशुद्धि पर रूक जाना होगा। विशुद्धि पर लीलामय है पर उसके आगे आज्ञा पर चलना है। तो जो आज्ञा का चक्र है ये तप है। तब आपको होलिका का जलना सोचना चाहिए क्या था? प्रल्हाद के तप के कारण होलिका जल गयी। तो हम भी उस तप में आगे बढ़ें। क्योंकि विशुद्धि तक तो हम लोग आ गये समझ लीजिए कि सब आपस में प्रेम से रहते हैं। अब ये भी पता नहीं कि हैं कि नहीं। थोड़ा सा उसमें भी मुझे शक है। पर कहना नहीं चाहती क्योंकि आप सोचने लगेंगे कि हमने गलत काम किया, ये किया, वो किया तो और भी बायीं विशुद्धि पकड़ जाएगी। लेकिन विशुद्धि तक है, ठीक है, हममें सामाजिकता आ गयी। आपसी प्रेम आ गया। सारे विश्वबंधुत्व में उतरें। अभी भी ऐसे लोग तो बहुत हैं ही जो गहरे उतर गये हैं लेकिन ऐसे भी थोड़े बहुत लोग हैं जो अब भी अपनी छोटी-छोटी बातें सोचते रहते हैं कि 'मैं कौन जाति का हूँ? मैं कौन जगह का हूँ? और फिर ऐसा कैसे हो सकता है?' और हम विश्वबंधुत्व की बात कर रहे हैं। विश्वबंधुत्व में तो आपकी जाति-पाति, देश-विदेश सब छूट जाते हैं, वो जो छोटी मर्यादायें बनी हुई हैं। अगर आप अमेरिका में पैदा होते हैं तो आप अमेरिकन हो जाते हैं, आप यहाँ पैदा हैं तो हिन्दुस्तानी हो। इसका मतलब ये नहीं कि आप हिन्दुस्तानी हो गये तो अमेरिका या कहीं भी देश के लोगों से आपका रिश्ता नहीं है। आप सभी एक ही माँ के बेटे-बेटियाँ हैं। इसलिए विश्वबंधुत्व में उतरे हुए हो।

तो पहले तो यही बात सोचनी चाहिए कि हमने विशुद्धि लाँची है या नहीं। जब हम होली खेल रहे हैं तो हम मर्यादा में हैं या नहीं। अभी किसी ने पूछा था कि 'माँ, क्या औरतों के साथ आदमियों ने होली खेलनी चाहिए?' मैंने कहा, 'वैसे तो कुछ भी करें लेकिन सहजयोग में नहीं।' क्योंकि भाई-बहन में होली नहीं खेली जाती। आप जानते हैं। क्योंकि श्रीकृष्ण ने अपनी मर्यादायें जैसे, भाभी है, देवर है इनके बीच में एक तरह की मर्यादा है। भाई-बहन में पूरी मर्यादायें होनी चाहिए। देखिए भाई-बहन का रिश्ता कितना सुन्दर है कि पूरी मर्यादायें हैं। पूरा प्रेम है। लेकिन भाई-बहन कभी एक दूसरे का हाथ पकड़ कर नहीं बैठते। अपने देश की जो विशेष चीज़ है वो हमारा कल्चर है। हमारी संस्कृति है।

इधर एक भाईसाहब हैं उनकी एक बहन है, दोनो एक साथ कभी नहीं बैठेंगे। अलग-अलग बैठते हैं। लेकिन प्रेम भाई-बहन में बहुत ज्यादा होता है। अपने आप से भी। वैसे लड़ाई करेंगे आपस में भाई-बहन। लेकिन उनकी बहन को कोई कहे तो मारने पर, खून पर आ उतरेंगे। इस प्रेम की जो विलक्षण प्रकृति है, एक विलक्षण प्रकृति है। एक विशेष प्रकृति है भाई-बहन में और वो नैसर्गिक है। निसर्ग से मिली हैं। कुदरती है। तो भाई और बहन में आपसी प्रेम बहुत है, नितान्त श्रद्धा है। लड़ाई भी करेंगे, झगड़ा भी करेंगे। तू-तू, मैं-मैं भी हो जाए। बचपन में तो हाथापाई भी हो जाती है। कोई बात नहीं। पर अन्दर से बहुत ज्यादा प्रेम है। और अत्यन्त शुद्ध प्रेम है और इस शुद्ध प्रेम की होली हम नहीं खेल सकते कि कहीं हमारी बहन का हमारे हाथों अपमान न हो जाए। भावज है और देवर है वो आपस में मज़ाक उड़ाये या उनके कपड़े फाड़ डाले, कुछ भी करे चल जाता है। वैसे करना नहीं चाहिए, लेकिन उनका रिश्ता और है। लेकिन भाई-बहन के रिश्ते में एक तरह का बड़ा ही सुन्दर सा, गोपनीय, मर्यादित, बँधा हुआ प्यार है और उसके संगोपन में नैतिकता की अतिशयता है। अतिशयता है। तो भाई-बहन में होली खेलना मना है। कोई सोचता भी नहीं ऐसा क्यों?

उसके बाद इस लीलामय जीवन से हमें अगर ऊपर उठना है, आज ठीक है, कल ठीक है, होली खेल लीजिए, गाना-वाना गा लीजिए, नाच भी लीजिए, आज भी नाचिए कोई हर्ज नहीं लेकिन उसके बाद हमें आज्ञा पर उतरना जरूरी है। क्योंकि इस तरह के व्यवहार से जो आनन्द मिलता है, आपस में जो शुद्धता मिलती है, अच्छाई मिलती है, भाईचारा होता है, विश्वबंधुत्व आता है उससे हम फैल से जाते हैं। गहराई को छूने के लिए जरूरी है कि तपस्विता चाहिए। फैल हम जाते हैं बहुत। सोचो बहुत जल्दी फैलता है। फैलेगा बहुत जल्दी। लेकिन गहरे कितने उतरे हैं? गहराई के लिए तपस्विता की जरूरत है। अब तप का मतलब ये नहीं कि बैठ के उपवास करो। जरूरी नहीं। पर अपना चित्त अगर खाने पर है तो उसे हटाना है।

मेरा चित्त कहाँ है इसको देखना ही सहजयोग की तपस्विता है। क्योंकि चित्त से ही आप अपनी आज्ञा खराब करते हैं। कहाँ है मेरा चित्त? मैं क्या सोच रहा हूँ? इस वक्त मैं क्या कर रहा हूँ? क्या सोच रहा हूँ? ये अगर अपना चित्त आप देखें अंतर्मन को हमेशा अपने सामने रखें तो आपका चित्त जो है वो आज्ञा में प्रकाशित हो जाएगा। यही तपस्या है कि अपने चित्त का निरोध, अपने चित्त का अवलोकन, चित्त का विचार। अब देखिए आपका चित्त कहाँ गया? मैं बात कर रही हूँ चित्त



कहाँ है? चित्त की बात करते ही चित्त कहाँ गया देखिए। इतना विचलित चित्त, मैं बात कर रही हूँ। आपका चित्त कहाँ है? चित्त की ओर नज़र रखना। चित्त का निरोध माने जबरदस्ती नहीं। लेकिन अब आत्मा के प्रकाश में अपने चित्त को देखने से अपना चित्त जो है वो आलोकित हो जाता है। एकाग्र हो करके अपना चित्त देखना चाहिए। किसी भी चीज़ को देखना है। जैसे अब ये खंभा है मेरे सामने। इसमें सुन्दर से फूल लगे हुए हैं। अब हर कटाक्ष में निरीक्षण हो जाता है। ये सारा मुझे याद है कि कौन सा कहाँ पर? कितना अन्तर रह गया? पूरा चित्र सामने है। चित्त की जो एकाग्रता है उसी से ये चित्र बनता है। उसीसे आपकी स्मृति अच्छी हो जाती है। सब चीज़ पूरी तरह से आप जान सकते हैं। चित्त से ही सब चीज़ जानी जा सकती है। लेकिन चित्त अगर विचलित हो तो आप किसी भी चीज़ को गहराई से नहीं पकड़ सकते। उपरी तरह से। हम देखते हैं कि बीस-बीस साल के लोगों को भी कुछ पूछिए खास कर विलायत में किसीसे पूछिए, 'तुम्हारा नाम क्या है?' तो पहले हूँ, फिर हाँ, फिर हीँ। 'अरे भाई, हमने पूछा तुम्हारा नाम क्या है?' 'आपने क्या पूछा मेरा नाम क्या है?' 'हाँ, मैंने पूछा आपका नाम क्या है?' हाँ, फिर सोचा मेरा नाम क्या है? 'क्या कहा आपने मेरा नाम क्या है?' पाँच मिनट उनको यही नहीं समझ में आ रहा कि मैं क्या कह रही हूँ। तो मैंने कहा, 'भाई, तुम ड्रग-वग लेकर आये हो कि क्या?' 'नहीं, मैं लेता था।' मैंने कहा, 'तुम्हारा जो ब्रेन है उसका तो बिलकुल मलिदा बन गया। तुमको मैं पाँच मिनट से पूछ रही हूँ तुम्हारा नाम क्या है? तुम हाँ, हाँ, हीँ, हीँ कर रहे हो।' क्योंकि असल में ड्रग से नहीं हुआ इतना, जितना चित्त से हुआ है। चित्त इतना विचलित हो जाने से, चित्त हर समय घूमता ही रहेगा। अब देखिए आप, मैं तो हर जगह देखती हूँ एअरपोर्ट पर, बात इनसे कर रहे हैं देख रहे हैं इधर, उधर देख रहे हैं, उधर देख रहे हैं। याद कुछ भी नहीं रहा, कौन है, क्या है? **शुद्ध चित्त जो होता है वो एकाग्र होता है। और एकाग्र चित्त वही चीज़ लेता है जो लेना है। जो नहीं लेना है उधर देखता ही नहीं।** उसको दिखाई ही नहीं देगा, हट जाएगा चित्त वहाँ से अपने आप। क्योंकि वो इतना शुद्ध है कि अशुद्ध चीज़ में वो मलिन हो ही नहीं सकता। जा ही नहीं सकता। तो ये अब आप ही के हाथ में है कि आप अपने अन्दर इसको देखें, कि हमारा चित्त कहाँ जा रहा है? यही तप, सहजयोग का तप सिर्फ़ ये ही कि मेरा चित्त कहाँ है? मैं कहाँ जा रहा हूँ? मेरा मन कहाँ जा रहा है?

अगर ये तप आपने कर लिया तो आज्ञा को आप लाँघ गये। और सहस्रार में तो कोई प्रश्न ही नहीं क्योंकि हम बैठे ही हुए हैं। पर अगर आप आज्ञा को नहीं लांघेंगे तो फिर सहस्रार में हमें बड़ा मुश्किल हो जाता है। क्योंकि आज्ञा का चक्र बहुत ही ज्यादा संकीर्ण है। उसमें से खींच निकालना माने मुझे डर लगता है कहीं हाथ-पाँव न टूट जाए आप लोगों के। तो आज्ञा के लिए जरूरी है कि तप करें। और जैसे ही आप तप करना शुरू कर दें तो आप गहराई को छू लेते हैं।

सहजयोग में एक साहब बता रहे थे, सहजयोगी हैं उनको कैन्सर हो गया है। मैंने कहा, 'वो कैसे सहजयोगी हैं। वो आये होंगे प्रोग्राम में लेकिन उनका चित्त इधर-उधर होगा। शायद अपने लड़के के लिए लड़की ढूँढ रहे होंगे, या कुछ और ढूँढ रहे होंगे, ऐसे कैसे उनको होगा। कैन्सर तो उनको हो ही नहीं सकता।' हो गया, इसकी वजह ये बैठे थे प्रोग्राम में, आये थे लेकिन कुछ न कुछ अपनी विपदा सोचते रहे। 'अरे, मेरे साथ ये हुआ, मेरे साथ वो हुआ, ऐसा हुआ, वैसा हुआ। और माताजी से मैं कब बताऊँ मेरी विपदा क्या हुई?' बजाय इसके जो कहे जा रहे उसको समझें। अपनी ही अंदरूनी बात कोई सोच-सोच के आप चले गये उस बहकावे में और उस बहकावे में कैन्सर की बीमारी हो गयी। ये बीमारी हो गयी, वो बीमारी हो गई। वैसे ही मानसिकता थी, हम मन से क्या सोच रहे हैं। मन में हमारे कौनसे विचार आ रहे हैं। सब यही ना कि हमको ये दुःख है, वो दुःख है, ये पहाड़ है। लेकिन सोचना चाहिए अपने पर कितने आशीर्वाद हैं माँ के। दिल्ली शहर में करोड़ो लोग रहते हैं। कितनों को सहजयोग मिला है। हम कोई विशेष व्यक्ति हैं, ऐसे नहीं कि अपने चित्त को बेकार करें। हमें सहजयोग मिला है। इसकी धारणा होनी चाहिए अन्दर से और उस अन्तर्मन में उतरना चाहिए। उसी से ये झूठी मर्यादायें जो हैं टूट जाएंगी। और अगर आप नहीं तोड़ियेगा तो किसी न किसी तरह से आपको कुछ अनुभव आयेंगे कि आप टूट जाएंगे। जिस चीज़ को आप सोचेंगे कि ये हमारा अपना है आप कहेंगे हम दिल्ली वाले हैं। एक दिन ऐसा आएगा कि दिल्ली वाले ही आपको ठिकाने लगायेंगे। आप नोएडा वाले हैं तो एक दिन ऐसा आएगा कि नोएडा वाले आपके पीछे बन्दूक ले कर लग जाएंगे। तब आपके समझ में आ जाएगा कि क्यों कहता था नोएडा वाला हूँ? और फिर जब दौड़ेंगे दिल्ली की तरफ तो दिल्ली वाले कहेंगे कि 'आप तो नोएडा वाले हो, यहाँ किस लिए आये तुम?' तो घर के न घाट के ये हालत आपकी हो सकती है।

उसकी वजह ये कि आपका चित्त ही ऐसा है जो न घर का न घाट का। जब तक इस गहराई में नहीं उतरेंगे तब तक आप अगर अपने को सहजयोगी न कहें तो सहजयोग ही क्या है। तो भी मैं मानती नहीं इस चीज़ को कि **सहजयोगी का पहला लक्षण ये है कि वो शान्त चित्त और अत्यन्त सबल होता है।** किसी से डरता नहीं। सबल है और उसका जीवन अत्यन्त शुद्ध होता है। उसका शरीर शुद्ध होता है। उसका मन शुद्ध होता है और आत्मा के प्रकाश से वो सारी दुनिया में प्रेम फैलाता है। जो आदमी प्रेम नहीं कर सकता वो हमारे विचार से सहजयोगी बिलकुल है ही नहीं। वो तो पहली ही सीढ़ी नहीं चढ़े।

इस तरह से अगर आप समझे कि आज होली है, होली के दिन हम बहुत मज़ा उठायेंगे। कोई बात नहीं। श्रीकृष्ण ने ही कह दिया तो खेलो, कूदो, ये लीला है। सब दुनिया लीला है। और लीला के ऊपर जो मर्यादायें हैं उसको पाने के लिए आज्ञा पर आपको तप करना होगा। जैसे आकाश में आप देखते हैं कि बहुत सी पतंगें चल रही हैं। लेकिन वो किसी के हाथ में होती है। अगर कोई भी पतंग कट जाए, हाथ से छूट जाए तो न जाने वो कहाँ चली जाए। वही हाथ आत्मा है। अपने चित्त को अपने आत्मा की ओर रखिए। अपने को शुद्ध करते जाना ही सहजयोग में तपस्वरूप है। इसके लिए आपने आज हवन किया। ये भी तप है। क्योंकि अग्नि जो है वो सब चीज़ को भस्म कर देता है। उसी तरह से आपके तप से आपके अन्दर जो भी इस तरह के दुर्विचार हैं या गलत इस तरह की मर्यादायें हैं वो सब टूट जाएंगी। आनन्द पाना ये आपका अधिकार है, और आप आनन्द को पा सकते हैं और पाया है आपने आनन्द को। लेकिन आनन्द बाँटने के लिए अपने अन्दर गहराई होनी चाहिए। अगर आप गंगाजी में जाएँ और इतनी सी एक छोटी कटोरी ले जाएँ तो आप कटोरी भर पानी लेकर आ जाईये। लेकिन अगर आप एक गागर ले जाएँ तो आप गागर भर के ले आ सकते हैं। किन्तु किसी तरह से आप ऐसा कुछ इंतजाम कर लें कि पूरा समय गंगा जी का पानी बहता आये आपकी तरफ तो आपकी चारों तरफ गंगा ही बहती रहें। तो किस स्थिति में आप लोगोंको देखना चाहिए कि क्या आप कटोरी भर पानी सहजयोग से ले रहे हैं। क्या आप सीमित आनन्द में हैं। क्या आप सबके आनन्द के लिए हैं और अगर स्वयं ही इसका स्रोत हैं तब आपके समझ में आ जाएगा कि होली मनाने के लिए भी गहराई चाहिए और इस आनन्द को भी हमेशा उपभोग लेने के लिए भी गहराई चाहिए।

इसलिए आज्ञा का और विशुद्धि का बड़ा नज़दीकी रिश्ता है। और आप तो जानते हैं कि बाप-बेटे का रिश्ता है, कितना गहरा रिश्ता है। तो गंभीरता से रहना, बेकार में मुँह बना के रखना और रौब झाड़ने के लिए बहुत लोग कम बात करते हैं और कोई लोग बेकार में ही ज्यादा बात करते हैं। इस तरह से दोनों तरफ से विशुद्धि खराब हो जाती है। लेकिन दूसरों को सुख देने के लिए अच्छी बात करना। दूसरों से प्रेम जोड़ने के लिए अच्छी बात करना। आपसी लड़ाई, झगड़े मिटाने के लिए सुन्दरता से बात करना इस सबसे विशुद्धि चक्र जो है वो एकदम ठीक होते जाता है और इस तरह से जब आपकी विशुद्धि ठीक हो जाती है तब फिर आप देखते हैं कि 'जब मैं किसी से बात करता हूँ तो उपरी तरह से ही लोगों को खुश कर रहा हूँ। अन्दरूनी तरीके से नहीं हो रहा।' तब आपको खयाल करना चाहिए कि मेरी गहराई अभी नहीं हुई। जैसे नितान्त सा किसी के प्रति कह दें हम कि हाँ भाई, कल हम आपके लिए ये चीज़ लायेंगे, और छोटी तबियत के आदमी या कहना चाहिए कि बहुत ही उथले स्वभाव के आदमी हैं वो बहुत उथले मन से लाएंगे वो चीज़ें। उसका कोई असर नहीं होने वाला, पर एक अगर छोटा सा फूल भी कोई पूरे हृदय से दे, उसका बहुत असर सहजयोग में हो सकता है। तो जिसे कहते हैं पूरे हृदय से कोई कार्य करना। किसी की दोस्ती है ऊपरी-ऊपरी नहीं रखो। अन्दरूनी रखो। वही चीज़ रहेगी जो कुछ भी विशुद्धि है, जब तक खुश है, आज्ञा की गहराई नहीं होगी तब तक आपकी विशुद्धि जो है बहुत ही उथली रह जाएगी। आज्ञा की गहराई होना बहुत जरूरी है। आज्ञा की गहराई माने ये कि कोई भी विचार करके आपने चीज़ नहीं करी। उसको कैलक्यूलेट करके नहीं करते कि मैं इनको आज एक रूपया दूँ तो मुझे मिल जाएगा। माताजी के पास अगर मैं पाँच रूपये देता तो मुझे सौ रूपये मिलते हैं। या ऐसा करने से ये हो जाए। नहीं अन्दर से मुझे लग रहा है कि करना ही चाहिए। सहजयोग में मुझे करना ही चाहिए। मुझे देना ही चाहिए। मैंने कुछ नहीं दिया अभी तक। दिखावे के लिए नहीं कि आज पेपर में छप जाए कि आज सहजयोग में पाँच सौ या दो रूपये दिये। या कुछ इस तरह से। नहीं, नहीं। आपने जो भी किया हृदय से की ये चीज़ क्यों नहीं मैं कर सकता। मुझे करना चाहिए। उसके बगैर चैन ही नहीं आना चाहिए। मैंने कुछ नहीं किया। जब ये स्थिति आपमें आ जाएगी तब आप समझ लीजिए कि आपकी गहराई जो है वो विशुद्धि पर काम कर रही है, और गहराई में आप जब विशुद्धि पर काम करेंगे

तभी आपका जनहित, जनसंबंध और विश्वबंधुत्व जो है उसमें कोई ठोसपन आ जाएगा। नहीं तो ऐसे ही ठीक है जैसे आप राम-राम, सलाम, नमस्कार।

तो आज के इस होली के दिन हमें वो चीज़ें जला देनी चाहिए जिससे हमारा चित्त खराब हो जाता है। जिससे हमारी आज्ञा खराब हो जाती है। तो दोनो ही चीज़ है कि चित्त भी साफ हो जाए और आनन्द और बोध में हम लोग होली मनायें। जिस दिन इसका पूर्ण काम्बिनेशन बन जाएगा, इसमें एकरूपता आ जाएगी दोनो चक्रों में, सहस्रार में कोई प्रश्न नहीं रहेगा। यही दो चक्र जो है जो गड़बड़ करते हैं। और विशुद्धि से ही निकलकर आप जानते हैं कि दोनो नाड़ियाँ ऊपर जाकर और आज्ञा पर क्रॉस करती हैं। तो विशुद्धि से बहुत ही संबंध है। इसलिए विशुद्धि की ओर जब आपका चित्त जाता है, श्रीकृष्ण की ओर, तो उनकी जो विशेषता थी वो ये थी कि राधाजी और राधाजी की शक्ति, आल्हाददायक, दूसरों को आल्हाद देना। आनन्द देना, दूसरों को आनन्द देने की उनके अन्दर की शक्ति थी। उनको देखते ही लोगों को आनन्द आ जाता है। जानवर हैं, पक्षी हैं, सब। ये विशुद्धि की देन है कि जो देखे वो खुश हो जाएं। जो बोले खुश हो जाए। जो कहे खुश हो जाए। जिसको कहते हैं बागबाँ हो जाना। जो कि फूलों में है, बच्चों में है। वो आल्हाददायिनी शक्ति आपके अन्दर जाग्रत हो सकती है। लेकिन जब तक उसमें गहराई नहीं आएगी तब तक ये आल्हाददायिनी शक्ति ऐसे ही ऊपरी, जबानी जमा-खर्च। तो इन दोनो का मेल आपको सोच लेना चाहिए। तो कोई भी आज सीरियस बात तो मैंने कही नहीं। लेकिन समझाने की बात ये है कि हमारे अन्दर गहराई का आना बहुत जरूरी है और गहराई से किसी चीज़ का आनन्द लेना भी बहुत जरूरी है।